

पात्र-परिचय

पुरुष

१	सूत्रधार	नाटकक स्थापक ।
२	शंकर	महादेव, नायक, तपस्वी, वर ।
३	कामदेव	कामक देवता ।
४	नारद	मुनि, घटक ।
५	हिमालय	पर्वतराज, गौरीक पिता ।
६	पुरोहित	विवाह करओनिहार ।
७	ब्रह्मा	प्रसिद्ध देवता ।



स्त्री

१	नटी	सूत्रधारक स्त्री ।
२	गौरी	हिमालयक कन्या, नायिका ।
३	सखी	गौरीक सखी ।
४	रति	कामदेवक स्त्री ।
५	मेना	हिमालयक पत्नी, गौरीक माए ।
६	नेना	योगिनी देवता ।



ॐ नमः सरस्वत्यै
कवि लाल विरचितं

गौरीस्वयंवरनाटकम्

रघुरचक्षुःखण्डं लसच्छृण्वदण्डं
रणदभङ्गगण्डं विराजत्त्रिपुण्ड्रम् ।
समस्तारिमुण्ड - प्रणाशतिशौण्डं
भजे मञ्जुकण्डं गणेशं प्रचण्डम् ॥१॥

अभ्यञ्ज—

मौली भाति तरङ्ग-रङ्गसहिता मन्दाकिनी पावनी,
भाले चन्द्र-धनञ्जयी च. हृदये व्यालावली मञ्जुला ।
अर्द्धाङ्गे गिरिजा सुषधानयना मुक्तागुणैर्भूषिता,
स त्वा रक्षतु सादरं पशुपति रक्षिचास्ति विश्वेश्वर ॥१॥

श्रीदुर्गा

श्रीमाधव

श्रीगणेश

मनोरम चन्द्रमाक खण्ड (अर्धचन्द्र) सौ युक्त सुंदरूपी दण्ड (छंटा)
सौ शोभित, गण्डस्थल (कटला) पर मुखैत भीरा सौ युक्त, (कपाद पर)
त्रिपुंड्र (भस्मक तीन रेखा) सौ शोभित, सकल शत्रुक मूढीक नाशकरवा
मे पराक्रमी (शौण्ड) सुन्दर काण्ड (मदधाराक स्थान गण्डस्थल) बाला,
उग्रस्वरूप गणेशक वन्दना करैत छी ॥१॥

दोसरो पद्य—

(जाहि शिवक) माध पर तरङ्गक (लहरिक) छटा - बाली - पवित्र
कपनिहासि गङ्गा, कपार पर चन्द्रमा ओ अग्नि, हृदय पर सुन्दर साप
सभ, तथा आधा अंग मे मोतीक माला सभ सौ सजाओल कमलसनक
आखिवाली पार्श्वती शोभित छविन्ह से महादेव (पशुपति) आदरपूर्वक
अहाँक रक्षा करव जे संसारक ईश्वर बिकाह ॥२॥

अपि च—

निशाःश्विनावभूषणा महामृगेन्दुवाहना
विनेत्र-हंसवाहनादिभिः सदैव वस्थिता ।

कपाल-मालधारिणी सुरारिवुष्टदारिणी
सुरोष-भयकारिणी सदा तनोतु वः शिवम् ॥३॥

प्रणम्य शङ्करं देशं चाङ्कुरी च गजाननम् ।
कविलालः करोत्येनां गौरीस्वयंवर^३—नाटकम्^४ ॥४॥

नाट-रागे गीतम्—१

जय हरिगमनी !, जय हरिगमनी, देधु अभय वर हर-रमनी ॥५०॥

अति विकराल कपाल-माल प्रिय^५,

शोभित कुच-तट भलक मनी ।

लम्बित कच तर छपित छपाकर,

भुज पर भूषण^६ भुजग फनी ॥

आओरो—

चन्द्रमाक्षी गहना से युक्त, महान् सिंहक वाहन (सवारी) वाली, महादेव-ब्रह्मा (हंसवाहन) आदि देवता से सतत पूजित कपाल (मनुष्यक मुण्ड) क माला धारण करने, देवताक शत्रु ओ बुष्ट के मारनि-हारि ओ देवतालोकनिक कल्याण कएनिहारि (भगवती) अहाँलोकनिक सतत कहयाण करधु । ३॥

शंकरभगवान्, गौरी (शांकरी) ओ गणेश के प्रणाम कए कविलाल एहि गौरीस्वयंवरनाटक के बनवैत छथि । ४॥

नाट-राग मे गीत—१

सिंहवाहिनी भवगवतीक जय हो, जय हो । ओ महादेवक पत्नी हमरा-लोकनि के अभयदान देधु । हुनक मरा (प्रिय=प्रीति) मे अत्यन्त

१ - एहिनाम 'हरिगमनी' पद मे श्लेष अछि । ओ ताहि सँ विरोधानास अलंकार होइत अछि—हरि=विष्णु, शनिक पत्नी, 'हरगमनी'=महादेवक पत्नी कोना होइ-सीह ? उत्तर अछि—'हरि=सिंह, ताहि पर चलयवाली' अर्थ कएने विरोधक परिहार होइत । २—शार्ङ्गधर—हं । ३-गौरीस्वयंवर-हं । ४-नाटकम्—प्र० । ५-प्रिय—हं । ६-भूषित—हं ।

खप्पर तर करवाल-कलित कर,

शुम्भ - निशुम्भ - दम्भ - दमनी ।

रिपु भट विकट निकट छटपट कए

धए पटकल चटपट अघनी ॥

कुपित-वदन पर नयन विराजित,

अचण - अरुण युग कमल सनी ।

लह लह रसन, शशन दाड़िम धिज,

निजगण जन मन दुख - शमनी ॥

सुरनर मुनि गण, हरवित सभे मुनि

हरिहर घर के तोहरि सनी ।

रत्तबीज महिषासुर मारल

असुर संहारल समर घनी ॥

डराओन मनुष्यक सूझीक माला छन्हि । स्तनक कात मे मणि चमकि रहलनि अछि । नसङ्गल केशक तथ मे चन्द्रमा (छपाकर=क्षपाकर) मुका-एल (छपित) छथि । बाहि पर महाविषयर (फणाबला) सापक गहना छनि । हाथ मे उत्तम खप्पर ओ तराहिर शोभित छनि । शुम्भ ओ निशुम्भ नामक राक्षसक अहंकार के दमन कएनिहारि छथि । विक-राल शत्रु योद्धा के भट दए लग आनि के फुर्ती सँ यथ्वी पद पटकि देने छथि । कोधित मुवमण्डल पर हुन ओझि दू गोठ लाल कमल सन लगैत छनि । जीह (रसना) लहलहाइत छनि । दाँत दाड़िमक (अतारक) बीया सन लगैत छनि । अपना लोकक (शेवकक) मनक दुःखक शमन (शान्ति) करैत छथि । (हितक ई चरित) मुनि के देवता मनुष्य ओ मुनि सभ आनन्दित भए के बहैत छथि जे विष्णु ओ महादेव घर मे अहाँ सनक के छनि ? अर्थात् क्यों नहि । अहाँ रत्तबीज ओ महिषासुर नामक प्रबल राक्षस के मारने छी ओ घनघोर युद्ध मे वैद्य सभक संशय कएने छी । हमर बुद्धि अचलाह भए गेल अलि जकर गति (सुधार) अहाँक चरण पर अछि ते एको क्षण हमरा नहि बिसरू । संसारक

हमरि कुमति मति गुथ पद पत्रे गति
विसरिअ मोहि जनु एकओ छनी ।
जगत-जननि पद-पंकज मधुकर
सरस सुकवि एह लाल भनी ॥
(नाम्बस्ते सूत्रधारः)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । (परितोऽवलोक्य) अहो ! देवसभाऽवलोक्यते । तथा हि—

दोहा

सबुध मित्र गुरु कवि-सहित, अतिविचित्र निरमान ।
सस कलाकर राजिता, देवसभाक समान ॥१॥
काव्य-सुधारस-पाथिनी, किन्नर-निकर विराज ।
रंगभूमि अमरावती, लाग तेहन सनि आज ॥२॥

माए (भगवती) क चरण-कमलक भेरा सरसकवि लाल एहि गीतके
गओलनि अछि ॥

(नाटकक मञ्जुलगीतक (नाम्दीक) बाद सूत्रधार प्रवेश करैत छथि)

सूत्र—अधिक विस्तार करब उचित नहि । (चारु दिस देखि) अहो ! देव-
सभे के देखि रहल छी । जेना कि—

दोहा

(एहि दोहा सभक अर्थ देवसभा ओ राजसभा दुनू पक्ष मे लगैत अछि ।
कोष्ठ मे देल अर्थ देवसभा-पक्षक थिक)—
(बुधग्रह) विद्वान् लोकनिक सहित मित्रवर्ग (सूर्य), गुरु=महामहो
पाध्याय लोकनि (बृहस्पति), कवि (शुक्रग्रह)=कविलाल, कविरत्न
आदि सहित, अत्यन्त अद्भुत सनक जुटाओल गेल अछि, सभ कलाकर
(चन्द्रमा)=कलाकार लोकनि सँ शोभित ई सभा देवसभाक समान
अछि ॥१॥

काव्यरूपी अमृतक रस-पान कयनिहार लोकनि जेना किन्नर (-व-
गणविशेष) क समुदायक रूपमे शोभित छथि, तहिना सनक आइ ई रंग-
भूमि=सभास्थल अमरावती (इन्द्रक नगरी)=मिथिलाक एक प्रसिद्ध
नगरी जे कोइलख नाम सँ भीर धरि छल लगैत अछि ॥२॥

देवसभा सम भागवत, सबे विधि सरस विशाल ।

देव अभाय कर हरषि हर, गोचर कर कविलाल ॥३॥

(नन्दासि श्रवण दत्ता) साधु, साधु ! कि कथयसि खनु ? 'तत्सभा-समम्
एतत् ते सदः निजगुणगणोत्कर्षाऽऽनन्दितम् आचरितुम् उचितम्' इति ?
मनोरममेव भणसि । तद् भवतु । प्रिये ! आगम्यताम् ।

(ततः प्रविशति नदी)

नदी—अञ्जउत ! को णिओओ अपुषिट्टिअडु ?

[आर्यपुत्र । को नियोमोऽनुष्ठीयताम् ?]

सूत्रधारः—प्रिये ! सदसि निकषे निजगुणगणकथनम् एकार्थमनुगच्छतीव ।
तद्वन्न किमद्भुतं चरितमवतारयामः ?

नदी—(विहस्य) इअ खु कि भणीअदि । भवदोज्जेव कोऽधि गुणो इह अहि-
मव पुरइरसदि । अहवा उज्जेण लोआणुरंजण भोदि तहा अम्हाहि
संवधा कदव्वं ।

भाग्यवश सब तरहें सरस ओ विस्तृत ई सभा देवसभा सन अछि ।
एतय महादेव प्रसन्न भए अभय दान देथु । कविलाल एहि नगरी के देखि
रहल छथि ॥३॥

(आकाश दिस कान दए) वाह, वाह ! की कहल ? 'ओही सभाक समान
अहाँक ई सभा अपन गुणसभाक उन्नति सँ आनन्दित करबाक लेल उप-
युक्त अछि' ? ई बड़ दीव कहल अछि । अच्छा, होअओ । प्रिये ! एम्हए
आउ ।

(नदी प्रवेश करैत छथि)

नदी—आर्यपुत्र (प्राणनाथ) ! कोन काज मे लागल जाय ?

सूत्रधार—प्रिये ! सभास्वपी कसौटी (निकष) पर अपन गुण सभक कथन
निश्चय अर्थ (पर्यायता) पर जेना पहुँचि जाय तेना लगैत अछि ।

ते एहिठाम कोन अद्भुत चरित देखाओल जाय ?

नदी—(हँसि केँ) ई की कहैत छी, अहाँक कोनो गुण एखनहि एतए अभीष्ट
कार्य के पूर्ण कए दैत । अथवा जाहि सँ लोकसभक मनोरंजन होअए
से हमरालोकनिक सर्वथा कर्तव्य थिक ।

[इदं खलु किं भाष्यते ? भावतोऽद्यैव कोऽपि गुण इह अभिमतं पुरयि-
ष्यत । अथवा येन लोकानुरञ्जनं भावति तथा अस्माभिः सर्वथा कर्त्त-
व्यम् ।]

सूत्रधारः—एवमेव, अत्र कः सन्देहः । स्मृतिमभिनीय गच्छेन कथयति।
जगदखण्डमण्डल विरुद्ध-दुरिताऽन्धकारि-विसखण्ड-प्रचण्ड-मार्तण्ड-
स्य हिमगिरि-तन्दिनी-वदन - सरस-सरोज - मकरन्दाऽऽस्वादन-
तन्मनोमिलिन्दस्य करुणा-पारावारस्य भगवतः श्रीविश्वेश्वरस्य
सरस-पदपङ्कज-परागमुद्दिष्य ज्योतिवित्कविलासेन निर्मितं श्री-
गौरीस्वयं वरनाटकमस्ति । तत् सङ्गीतकं क्रियताम् । ताहि तच्च-
रितम् उपहारीकरोमीस्पुषितम् । तदलं तर्त्तनारम्भा-विलम्बेन ।
श्रीगौरीशङ्कर-प्रवेशकं कृत्वा निवर्त्तयामः ।

(इतं निष्क्रान्तो)

॥ इत प्रस्तावना ॥

सूत्रधार यथार्थ कहल अछि, ताहि मे कोन सन्देह । (मोन पाइवाक अभि-
नय कए गय द्वारा कहैत छथि) 'सम्पूर्ण संसारमण्डलक विरुद्ध पाप
ओ शत्रुस्वरूप अन्धकारसुखी मृणाल कमलनाल (विस) क
खण्डक लेल प्रखर सूर्यस्वरूप', 'हिमालयक पुत्रीक मुखरूपी सरस
कमलक परागक आस्वादन मे एकाग्र भौरास्वरूप' दयाक समुद्र
भगवान् श्रीविश्वेश्वरक सरस चरणकमलक परागक उद्देश्य कए
के (आभिक हेतु) ज्योतिष शास्त्रक वेत्ता कवियर लालक बना-
ओल श्रीगौरीस्वयंवर नाटक छन्हि । ताहि लेल सङ्गीत प्रारम्भ
करू । खल ओएह चरित देल जाए (देखाओ) से उचित थिक
ते आव नाचमे विलम्ब कथीक ? श्रीगौरी-शङ्करक प्रवेशक
(सज्जा) कएके घुरैत छी ।

(दुहू प्रस्थान करैत छथि)

प्रस्तावना समाप्त

प्रथमोऽङ्कः

(तत्राऽऽदौ^१ तपोवने तपोरुद्धः श्रीशङ्करः प्रविशति ।)

भैरवोरागे गीतम् - २

आएल जगतगति देव महेश । शङ्कर नाम भयङ्कर भेष ॥
लाधल तप तपोवन साधि । आसन लाए लगाए समाधि ॥
आसन जटिल वसन खाल । निकट विकट भूत वेताल ॥
धीतल एहि विधि बहुत काल । कर खिआएह मुण्डक माल ॥
भयक भगत भनए लाल । भगत जगत होअ नेहाल ॥

सखीमण-समायुक्ता मुक्ता-मण्डित^२-भूषणा ।

आगता सा विशालाक्षी विनोदाय तपोवने ॥३॥

प्रथम अङ्क

(ताहिमे पहिने तपोवन मे तपस्वा मे लागल श्रीशंकर प्रवेश करैत छथि)

भैरवो-राग मे गीत—१

संसारक पति भगवान् महादेव अएलाह जनिक नाम तँ शङ्कर (कल्याण-
कारी) थिकन्हि मुदा भेष डराओत छन्हि । तपोवन मे नीकजका तप-
स्या ठनने छथि ओ आसन पर समाधि लगओने छथि । जटिल (अत्य-
न्त कठिन) योगासन लगओने छथि, धामक (बाघ आदिक) वस्त्र पहिरने
छथि ओ लगमे विकराल भूत ओ वेताल छन । एहि तरहें तपस्वा
करैत बहुत दिन बीति गेल । ततेक दिन धीतल जे हाथक मुण्डक माल
(जप करैत करैत) खिआए गेल । महादेवक (भयक) भक्त लाल कवि
कहैत छथि जे भक्त संसार मे कृतार्थ भए जाइत अछि ।

(एहि बीच) सखीसभक संग मोती सँ छाड़ल गहना पहिरने विश ल
आखिवाली (पार्श्वी) तपोवन मे खेलाइल लेल अएलीहि ॥५॥

१ - पुन नैष्ये - ह० । २ - भूषित - ह० ।

(ततः सखी च समं गौरी प्रविशति)

मालवरागे गीतम्—३

अम्बर ललित बलित शिर केश । देल गिरिराज बुलहि परवेश ॥
सखि संग रंग कर मन अनुमानि । देखए तपोवन आइलि भवानि ॥
भूमि-भूमि हेरल लता तरपूल । तोरलभि निअकर नवदल फूल ॥
विधिवस भए गेल एहन संयोग । देखलनि शंकर करइते योग ॥
कह कविलाख विनति कर जोरि । लागल कहए सखी सँ गौरि ॥

(सखीमधिकृत्य गौरी गीतेन कथयति)

धनाश्वीरागे गीतम्—४

आगे माइ, जोगिआ एक अद्भुत,
भूतगण संचर हे ॥ ध्रु० ॥
देखिय तपोवन, हरलन्हि मोर मन हे ।
आगे माइ, हमे न आएव निज वास,
पाम तेजि हिनकर हे ॥

(सखीक संग गौरी सेह प्रवेश करैत छथि)

मालवराग मे गीत—३

सुन्दर वस्त्र पहिरने, माथ पर केश केँ सजओने गिरिराज हिमालयक
कन्या प्रवेश करैत छथि । सखी समक राग विलास करैत मन मे निश्चय
कए केँ तपोवन देखए गौरी अएलीह । भूमि भूमि केँ लप्ती ओ माछक
जडि केँ देखैत अपना हुअे नव पात्तीबला फूल तोड़लनि । भाग्यवश
एहन संयोग (अवसर) आवि गेल जे योग साधन करैत महादेव केँ गौरी
देखि गेलथिन्ह । लालकवि कहैत छथि जे तखन गौरी विनयपूर्वक कल
जोड़ि सखी केँ कहय लगलथिन्ह ॥

(सखी केँ पकड़ि गौरी गीत द्वारा कहैत छथिन)

धनाश्वी-राग मे गीत—४

माइ ने माए !! एकटा एहिठाम अद्भुत योगी छथि जिनकाँ लग भूत
सब दहलैत छथिन्ह । तपोवन मे ओएहु देखअनु जे हमर मन हरिलेलनि

१ - 'सूत सूत' मे धमक अलंकार । 'आन आन' मे सेहो ।

धिका त्रिभुवनपति, हमरा ओहे गति हे ।

आगे माइ, जाह भवहुँ किरि गेह,

नेह जनु विसरह हे ॥

असन गरल कर, वसन वषम्बर हे ।

आगे माइ वरदक पिठि असवार,

छार तन अभरण हे ॥

उर पर विषधर, चान तिलक कर हे ।

आगे माइ, हरलनि हमर गेआन,

आन नहि मन पड़ हे ॥

मुकवि लाल कह के बड़ हिनतह हे ।

आगे माइ, सखि तेजि रहलि भवानि,

जानि शिवशंकर हे ॥

(इति निष्क्रान्ता सखी)

(ततो हरपरिचर्या गौर्या बहुतरङ्गिनाम्यतीतानि) ॥

× ×

× ×

× ×

अछि । माइ ये माइ !! हम हिनक लग छोड़ि केँ अपन गामपर नहि
आएव । ई तीनू लोकक पति बिकाह ओ हमर गति ओएहु बिकाह ।
तेँ तेँ सब किरि केँ चर जाह, मुदा, हमरा नहि विसरिहह । ई विष
(गरल) भोजन (असन) करैत छथि ओ बाघक छालक कपड़ा पहिरैत
छथि, बड़दक पीठ पर चढ़ैत छथि ओ देह मे छाउर गहना बनल छनि ।
छाती पर साप छनि ओ चन्द्रमाक तिलक कएने छथि । ई हमर ज्ञान
हरिलेलनि अछि जाहि सँ आम क्यो मने ने पड़ैत अछि । मुकवि लाल
कहैत छथि जे हिनका सँ प्य के अछि ? (अर्थात् क्यो नहि) । तेँ हिनका
गिन ओ शंकर बूझि गौरी सखी केँ छोड़ि एहिठाम (एकसरे) रहि
गेलीह ॥

(सम चर गेल)

(एकर बाद महादेवक सेवा करैत गौरी बहुत दिन बिला देलनि ।)

तत्राऽन्तरे—

लखहर [गीतम्]—५

अवतरल अतिबल तारकामुर मन्द, भल नहि जान यो ।
 सकल सुरवर विकल कर बड़, धूमकेतु - समान यो ॥
 भइ आकुल कमल - आसन, सबहुँ पूछल जाए यो ।
 करब की परकार कह प्रभु पुरित एकर उपाय यो ॥
 कह विरञ्चि विचारि निज हिय, पुगति फूर न आन यो ।
 गौरि सुत विघ्नेश तन्हितहुँ, एकर अछि अवसान यो ॥
 सुनि ई भन पाकशासन, आनविधि न निवाह यो ।
 करिअ तेहन विचार जे होअ तोरित गौरि विवाह यो ॥
 तखन गुरपति कहल मनसिज, जकर जे अधिकार यो ।
 जाए सत्वर करए चाहिअ, शिव शरीर विकार यो ॥

ताही बीच (गौरीक शिवपरिचर्या में लगलाक बाद एहन छी) —

लखहर गीत—५

महान् बलवान् मूर्ख (मन्द) तारकामुर अवतार लेलक अछि जे लोकक
 नीक करब नहि जनैत अछि, सब देवता केँ धूमकेतु (पुच्छल तारा,
 नाशकारक) जकाँ अतिविकल कए देने छनि । सबक्यो आकुल भए
 केँ ब्रह्मा (कमल आसन) लग जाए पुछलधिन्ह जे हमरालोकनि कोन
 प्रकारेँ (तरहेँ) को करी तकर उपाय छट दए कह हे प्रभु । ब्रह्मा
 (विरञ्चि) विचारि केँ कहलधिन जे आन कोनो उपाय नहि फूरैत अछि,
 गौरीक बालक विघ्नेश (विघ्न-बाधाक नाशक गणेशजी) होएधिन
 तनिकेँ सँ एकर नाश होयत । ई सुनि केँ इन्द्र (पाकशासन) बजलाह जे
 (विघ्नेशक उत्पत्ति) आगतरहेँ नहि भए सकैछ, से विचार करू ज हि सँ
 तुरत गौरीक विवाह होअए । तखन इन्द्र कामदेव (मनसिज) केँ कह-
 लधिन एहि कार्य में जतिक जे अधिकार से तुरत जाए केँ महादेवक

सङ्ग लइए वसन्त रतिपति, कएल सुदिद नेआन ये ।
 चलल आनन मोद मातल, हरए हरक वेआन यो ॥
 सुकवि लाल अकाल भेल, वसन्त-कालिन काल यो ।
 परम सुकलित लाग चहुँ दिश, लता-मञ्जुल-माल यो ॥

(अथ वसन्त-वर्णनम्)

[लखहर गीतम्]—६ (क)

ऋतुराज सरस विराज दश दिश, सबहुँ सँ एक साय यो ।
 कुञ्ज गृञ्जर मत्त मधुकर, करए भनभनकार यो ॥
 न्धारि न्धारि नेवारि चम्पक कुन्द सुन्दर भास यो ।
 जवा केतकि मालती नवमल्लिका परगास यो ॥
 कमल कुमुद - कलाप किशुक, नव नागसेर फल यो ।
 चार युथी जातिका, करवीर वृन्द अमूल यो ॥
 मुनिहुँ मानस गोह - कारक, परम उर उनमाद यो ।
 अङ्ग—अङ्ग अनङ्ग संगत, तषण करए विलास यो ॥

शरीर में विकार बनाउ । वसन्त ऋतु केँ संग लए केँ कामदेव (रति-
 पति) अपन ज्ञान केँ स्थिर कए लेलनि । मुँह पर प्रसन्नताक लहरि
 पसरल कामदेव महादेवक ध्यान भंग करवा लेल चललाह । कविलाल
 कहैत छथि जे तेहन असमय में वसन्त समय आवि गेल, चारु दिस अरु-
 न्त सुन्दर भए गेल, लक्ष्मीक सुन्दर समुदाय देखाय लागल ।

वसन्तक वर्णन—गीत—६(क)

रसमय वसन्त ऋतु सब सँ उत्कृष्टरूप सँ दशो दिशा में विराजमान
 अछि । कुञ्ज (लतागृह) सब में मदमातल भौंरा सब गृञ्जन करैत
 एम्हर ओम्हर भनभनाए रहल अछि । प्रत्येक वाटिका में नेवारि
 (कुन्दफूलक प्रभेद), चम्पा ओ कुन्दक फूल सुन्दर लागि रहल अछि ।
 ओड़ल, केओला, मालती ओ नवमल्लिका (चमेलीक प्रभेद) फूल सब
 फुलाएल अछि । कमल, कुमुदिनीक समूह (कलाप), पलाश, नागके-

५ - सुमन - ५० ।

बलित वन सहकार पल्लव, ललित कोकिल - नाद यो ।
 सुभन—परिमल मोद—पूरित, जगत पर ऋतुराज यो ॥
 एहन अवसर पाए मनसिज, जाए कर परवेश यो ।
 कुसुम - बान जहान वश कर, परम सुन्दर भेष यो ॥

(ततः अनाकलितं कामदेवः प्रविशति)

(सन्निधानमागत्य)

[लखहर गीतम्]—६ (ख)

कएल निज—परहार हर पर, चत—सायक साधि यो ।
 हेरल कम्पि कोहाए शंकर, छूटल सकल समाधि यो ॥
 वास आकुल देवता—गन, तेज उठल अपार यो ।
 हरक भाल हुताश मनसिज, भेल जरिकहु छार यो ॥
 मुकवि लाल अनाध—जन-गति, सहव के भू-दाप यो ।
 सुनि आकुल परम मानस, रती करए विलाप यो ॥

शर, सुन्दर जूही, चमेली, करवीरक समूह ई अमृत्य फूल सब मुनिलोक-
 निहुँक मन के मोहि लेख ओ हृदय मे अत्यन्त लज्जाद (वेचैती) आनि
 देख । अङ्ग अङ्ग मे कामसँ भरल युवक, विलास करैत अछि । वन मे
 धामक पल्लव शोभित अछि आ ताहिपर कोइलीक शब्द भए रहल अछि।
 फूलक सुगन्धि सँ पूर्ण संसारपर वसन्त आधि गेल । एहन अवसर पर
 कामदेव प्रवेश करैत छथि । हुनक फूलक बाण संसार केँ वश मे करैत
 अछि एवं ओ सुन्दर वेश बनओने छथि ॥

(तखन अनिच्छापूर्वक कामदेव प्रवेश करैत छथि)

(ख आधि)— (लखहर गीत)—६ (ख)

परहार = प्रहार । चत-सायक = आमक मंजरीक बाण । कोहाए =
 कोधित भए । वास = भय सँ । भाल-हुताश = कपार परक अग्नि सँ ।
 मनसिज = कामदेव । दाप = दर्प = अधिमान । मानस = मन मे ।

१ - गीतसब सामान्य जनभाषा मे अछि । अतः एतय सँ सबल कठिन शब्दक अर्थ
 देल जाइत अछि ।

(एतच्छ्रुत्वा विरह-हृत्तनह-ज्वाला-जाल-व्याकुलतरा रतिः प्रविश्य निःश्वस्य
 कथयति)—

कहना-मालवराने गीतम्—७

हे हर ! कओन हरल मोर नाह । ध्रु ॥

अछल अभेद, मोद नहि भरमहुँ, सेहओ न मन अधगाह ।

पल विषलेष, पहर सम मानिअ, कोन पनि होएत निवाह ॥

सोक कलाप, दाप दह मानस, उर उपजावए धाह ।

विरहक अधधि, अवह पड़ल छिअ, चौदिस लागू अवाह ॥

मानक आधि, वेआधि धाधि बड़, रङ्ग-रमस गेल दूर ।

विहि बड़ भेल, मोर कोन निरवय, हरलन्हि शिरक सिद्धर ॥

कुसुमक बान, जहान जकर वश, सब गुन अमार कस्त ।

सै मोरः साथ हाथ धए लाओल कि कएल बन्धु वसन्त ॥

मुकधि लाल कह धैरज धए रह, हरि-सुत होएत अनंग ।

ओ मनमथ तोहे, रती पलटि पुन, होएत तेहि विधि संग ॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

(ई समाचार (काम-दहन) सुनि विरहक आगिक धधराक समूह
 सँ अत्यन्त व्याकुल रति प्रवेश कए तेज श्वास लैत कहैत छथि ।)

कहना-मालवरान मे गीत—७

नाह = नाथ (स्वामी) । भरमहुँ = धमहुँ सँ । मन अधगाह = मन
 मे विचारलक । विषलेष = वियोग । कलाप = समूह । दाप दह = दर्प
 सँ जखन अछि । आधि = आशा वा मनक पीड़ा । अधधि = धधरा
 (ज्वाला) । विहि = धाता । जहान = संसार । बन्धु-वसन्त = मित्र
 वसन्त हमर पतिकेँ हाथ पकड़ि आनि कोन काण्ड कएलनि । हरि-सुत
 = श्रीकृष्णक पुत्रक रूप मे । अनंग = कामदेव । मनमथ = कामदेव ॥

(सब बहार भए गेल)

(तस्मादपसृत्य गौरी सखीसहिता निराकाङ्क्षित-हृदया महत्त-
पःपरायणा बभूव ।)

[इति विष्कम्भकः^१]

(पुनरागत्य जटिलधैरेण शङ्करः प्रविशति)

आसावरी-रागे--८

जटिल भेषे^२ देल परवेश । भसम-भूषित कपिल केश ॥
हालक वसन कए लेल काछ । आठहु आङ बाहिह रुदराछ ॥
भाङक झोरा काँख बोकान । माँगधि फिरि फिरि भीख बोकान ॥
कान्हू विराजित उपवीत शेष । काहु न बूझि पड़ए शिव भेष^३ ॥
सुकवि बतुर लाल कर गोचर^३ । गौरिहि गमए आएल हर ॥
(तपस्याछुड़ी गौरीमवलोक्य शंकरः कथयति)

शङ्कर—अधि मृगाक्षि बाले ! कथमिदमतिशुभकरं^३ तपः कलयसि ?

सखी—भगवन् ! पिनाकवाणि-पाणिग्रहणार्थमेव ।

(ओहिठाम = महादेवक लग, सँ हटिके गौरी सखीक संग हृदयक अभि-
लाषाके दूर कए महान् तपस्या मे संलग्न भेलीह ।)

[विष्कम्भक समाप्त]

(फेर आबि केँ जटा धारणकयल शेष सँ शंकर प्रवेश करैत छथि ।)

आसावरी राग मे गीत—८

परवेश = प्रवेश । कपिल = केश । वसन = वस्त्र । बोकान = बोरा ।
उपवीत शेष = शेगनागक जवेउ । गमए = जँचबाक लेल ॥

(तपस्या से संलग्न गौरी के देखि महादेव कहैत छथि ।)

शंकर—ऐ मृगनयनी बाला ! किएक ई दुःसाध्य तपस्या करैत छी ?

सखी—भगवन् ! महादेव सँ गिवाहक हेतुए ।

१. भूत वा भविष्य कथासक संक्षेप मे सूचना विष्कम्भक कहैत अछि । नाटिका
केँ सटुक सँ दूषेह भिन्न करैत ।

१. शिव विशेष - प्र । २. लाल गोचर - प्र । ३. तपसाकलयति - प्र ।

शङ्करः—(विहस्य श्लोकेन कथयति)—

वपु विक्रमाश्रमलक्ष्य जन्मता
विगम्भरत्नेन निवेदित वसु ।
वरेषु यद् बालगुणाक्षि ! मृग्यते
तरस्ति कि व्यस्तमपि त्रिलोचने ॥६॥

[कुमारसम्भवमहाकाव्ये ५-७२]

(श्लोकार्थे गीत पावसि)

भैरवी रागे--९

वरगुन एकओ न परमन जानि । कवि लव एत तप कएल भवानि ॥
तीनि तपन शिर, तथिहुँ हुताश । उर उर विषधरक निवास ॥
कतए सँ उलपन केमओ न जान । भूत-प्रेत संग फिरिबि मशान ॥
अनुदिल वसुहिन, वसन अकाश । नीलकण्ठ गर करए गरास ॥
सुकवि लाल कह नयन उदेरि । रोखलि गौरि सखी मुख हेरि ॥

(गौरी नक्रोध सखीमुखमवलोक्य कथयति श्लोकेन)

शङ्कर—(हँसि केँ श्लोक द्वारा कहैत छथि)—शुनका (महादेवकेँ) तेह विरूपे
(विकट रूप) छन्हि जन्मक पते नहि छनि (जे जाति बूझल जाय),
नाकट भिला सँ धनो विदिते छन्हि । असः हे बालनृगनयनी ! वर
मे जे जे माफल जाइत छैक (रूप कुल ओ धन) से त्रिलोचन
(तीन आँखिवला कुरुप महादेव) मे फुटाइयो केँ एको टा छनि ?

(श्लोकक अर्थमे गीत गर्वत छथि)

भैरवी रागमे--१०

पर-मन = अनका मन । तथिहुँ हुताश = ताहूँवर आनि । वसुहिन =
घनहीन । गर = गरल (विष), 'नीलकण्ठ कर गरल गरास' ई पाठ
अधित । उदेरि = फेरि, हटाए । रोखलि = प्रीणित भेलीह ॥

(गौरी तमसाए सखी दिस ताकि श्लोक द्वारा कहैत छथि)

गौरी—

निवार्यतामालि ! किमप्ययं बटुः
पुन विवक्षुः स्फुरितोत्तरावरः ।
न केवलं यो महतीऽवभाषते
शृणोति तस्मादपि यः स पापभाक् ॥७॥

अपि च—

इतो गमिष्याम्यथवेति चादिनी
चंचाल बाला स्तनभिन्नवस्कला ।
स्वरूपमास्थाय च तां कृतस्मिता
समाललम्बे वृषराजकेतनः ॥८॥
[कुमारसम्भवमहाकाव्ये ५-५६, ५४]
(श्लोकार्थे नोतं गायति)

एकतारा- रागे गीतम्—१०

हे तलि ! तबहु^१ सुनै छी गारि । ककरहु तह नहि होअ निवारि ॥१०॥
असत वचन कहते अनुताप । बड़जन निन्दा सुनलहु^२ पाप ॥

गौरी—सखी ! एहि बटक के^३ (महादेवक निन्दा सँ) मना करियहु । ई फेर
बजवाक लेल ठोर पटपटाए रहल छथि । जे महापुरुषक निन्दा करैत
अछि केवल सएह नहि पापभागी होइत अछि अपितु ओकरा सँ जे
सुनैत अछि सोहो ॥

आओरो—‘अथवा हमही’ एतए सँ चलि जाइत छी ई कहैत बाला
(तद्वर्णी गौरी) चलि देलनि जाहि सँ (वेग एवं स्तनक विक्षालताक
कारण) स्तनक द्वारा ओकर आवरण बलकल फाटि गेलनि कि एही
अवसर पर महादेव (वृषराज-केतन = वसुधा पर स्थानबला वा वसुधा^४
रूप चिह्नबला) अपन रूप धारण कए मुमुकाइत हुनक (गौरीक)
आलिङ्गन कए लेल ॥

(श्लोकक अर्थमे गीत गर्वैत छथि)—

एकतारा राग मे गीत—११

तह=सँ । अनुताप = दुःख । जटिल = जटाबला (महादेव) । करतल

४- नेरखी - ४० ।

एकरा कहल जाओ फिरि गौओ । नहि तँ हमे छोड़इ छी ठाँओ ॥
ई कहि चरण बटाओल जाए^५ । धएल जटिल हसि करतल धाए^६ ॥
कहलहि संकर हमरे नाम । करब विवाह जाए^७ निजघाम ॥
एतवा सुनि गौरि हरषित भेलि । तहिनन तप तेजि मन्दिर गेलि ॥
सुकवि लाल नहि थिर रह काल । सुदिन सदाशिव भेल दयाल ॥

[हति निष्काशाः सर्वे]

× ×

× ×

× ×

(महादेवस्तस्माद् देशादागस्य नारदगाहृतवान्)

शंकरः—भवति हिमालयो वक्तव्यो मह्यं युतामप्येति ।

नारदः—यथाज्ञापयति भवान् । (शृणुयता प्रचलितः) ।

आसावरी-रागे गीतम्—११

हे माइ ! नारद घटकराज । हेमत सँ अछि समिलन^८ काज ।
मिरिसुता^९ पड़पल्लव आय । बीहल बिहि विवाह उपाय ॥
आनी ठाढ़ कोल कर जोरि । कहलनि मुनि ‘हर माडल गौरि’ ॥
तेही काजे पठओलनि मोहि । सेह कहए हम अएलहुं तोहि ॥

धाए = हाथ पकड़ि केँ ।

[सभ बहार भए जाइतछथि]

(महादेव ओहिठाम सँ = गौरीक तपस्या-स्थान सँ आवि नारदकेँ
बजओल बिनह ॥)

शंकर—(नारद) अहाँ हिमालयकेँ कहियन्ह जे ‘हमरा बेटी (गौरी) दिअओ’ ।

नारद—अपनेक जे आशा । (ई कहि चलि देलनि) ।

आसावरी-रागमे गीत—१२

हेमत = हिमवान (हिमालय) । बीहल बिहि = विधाता विधान

१- जाओ - १ । २- जाओ हुं - २ । ३- जाएब - ३ । ४- अछि मिलन - ४० ।

५- मिरिसुता - ५० ।

हेमत से रूनि हरपित होल । दीड़ि मनाइनि निकट होल ॥
करब होते जे गइए निवाह । गीरी-गङ्गुर होअ विवाह ॥

(तुलसी मेना कवयिनि) —

गीतम् — १२

घर^१ घर भरमि जनम-मिठ, तनिकां वैहू^२ विवाह ।
से^३ हम करब गीरी-वर, ई आव कतए निवाह ॥
कतए भवन कहाँ आइग, कतए वाप^४ कहाँ माय ।
कतहु ठओर तहि ठहर, के कर एहन जमाय ॥
के कएल एह असोजन, केओ न द्विक परिवार ॥
जे घर^५ हिनक निवन्धन, धिक् धिक् से पजिषार ॥
कुल परिवार एकओ नहि, परिजन भूत-वेताल ।
देखि देखि भूर होअ तन, के सह हृदयक साल ॥
तुकावि लाज युनु मुन्दरि, ई तहि मन अवगाह ॥
जे अलि जकर विवाहलि, तनिकां सेह गए नहि ॥

(तुलसीप्रसाद देवसमूहः)

कएल । मनाइनि = मेना (हिमालयक अली) । निवाह = निमज्ज ।
(तखन मेना कहैत छथि) —

गीत — १३

जनम-मिठ = मरि जन्म । विवाह = निमज्ज । असोजन = असोजन
(अजाति) । निवन्धन = राजिक पोखी मे नाच चढ़ाएव । विवाहलि =
विवाहार्थ विधाताक द्वारा निर्धारित ।

(तखन देवताक समूह प्रवेश करैत अछि)

१ - कविकालक ई गीत मायक-परमेश्वरावध विद्यापतिक संग्रह मे मिलि गेल अछि ।

ग्रन्थ - [१] प्रियसुख संग्रह गीत सं० - ५१ तथा [२] गोविन्द झा-विद्या-
पति-गीतावली गीत सं० - ३४ ।

१० - ते पुनु होएत - ४० । ११-याव ओ माय ह० । १२ - एकर - ५० ।

ललित-रागे गीतम्-१३

ऐरावत चढ़ि सुरपति उपगत, हंस - गगन बिहि आउ ।
गरुड़ चढ़ल गरुडासन अएलाह । सबहि मीलि ठहराउ ॥
पवन विचारि बारि जगु लाविअ, तुरित बिदूषक जाउ ।
करि बरिआत बनाए सबहि विधि, शंकर वर लए आउ ॥
आस आए साइत भल साधल, शुभ शुभ गाइनि पाव ।
चहर-महर चहुँदिशि पुर बाजल, मण्डप तेदि बनाव ॥
मुनि फिर आए मनाए बुझाओल हेमत भाषल बात ।
भूत-परेत-पिशाच-जाल कए, हर साजल बरिआत ॥
सकवि गणक कह चलल दिगम्बर, सुन्दर वसहु पलानि ।
गुरही शंख गुदङ्ग रङ्ग कत, हर हर करैत भवानि ॥

(अब पिताकपाणिः पाणिग्रहणार्थ प्रचलितः)

दण्डक-पहरिआ-रागे गीतम्-१४

चलल शंकर करए स्वयंवर
ललित कटितट पट वधम्बर,
घर दिगम्बर २ ॥

कोटि लोचन-हीन सहचर,
सतत विनु पशु पगुहि पय चल,
महा डर [वर], वदन अहिवर

देखि होअ डर २ ॥

ललित-रागमे गीत-१५

सुरपति उपगत = इन्द्र अएलाह । बिहि = ब्रह्मा । गरुडासन = विष्णु ।
बारि = जल । साइत = विवाहक सामग्री । हेमत = हिमालय । पलानि
= सजाए ॥

(एकर बाद महादेव विवाह करए चललाह)

दण्डक पहरिआ रागमे गीत-१६

कटितट = डोर मे । लोचन-हीन = आन्धर । सहचर = संगी । पगुहि =
पयगुहि । महा डर डर = पैघ छाती पर सामक गुह घरेत । कहू = ककरहु

काहु बाहु न जंघ हिन—गल
करए गन—गन नाद अनुपल
संग भुत बैताल अतिबल

रंग भल—भल रे ॥

जेहन सब कर सतत सेवा
ताहि विजया धरु मेवा
बुझि पड़ए ने कतए के बा

परम देवा रे ॥

कुपित अनगित दुरित—हर्ता
बदन चन्द्र—मयूख—धर्ता
महिष—मर्दिनि - विहित भर्ता

जगत—कर्ता रे ॥

सुकवि लाल अनाथ—जन—गति
वामदेवक चरण * रति * मति
बेहु अभिमत, करव नति कति

आन गति नहि रे ॥

द्वितीय दण्डकं, मालवरागे गीतम्—१५

भाल ललित विशाल-लोचन, चन्द्रमण्डित त्रिपुण्ड रे ।
भंग रंग अंग लण्डित, गण्ड मण्डित मुण्ड रे ॥
समशान वास, पिशाच वास, निवास हास सुरंग रे ।
ब्याल-जाल कपाल माल, विभूति-भूषित अंग रे ॥

ने बाहि छैक आने जाँघ । हिन गल = गरदन सँ हीन । कुपित = तमसएला पर । दुरित-हर्ता = पापक नाश कएनिहार । चन्द्र-मयूख = चन्द्रमाक किरण । महिष-मर्दिनि = महिषासुरक नाशकएनिहारि भगवतीक । वाम-देव = महादेव । अभिमत = अभीष्ट ॥

द्वितीय-दण्डक-मालवराग मे गीत—१५

भाल = कपार पय । भंग रंग = भाङक उन्माद मे । अंग = कामदेव ।

अति डिमिक डिम डिमि डमरु-नाद, विशाल लाल दयाल रे ।
धुनि धधुर भङ्ग मृदङ्ग सङ्गत, ताल तत ततकाल रे ॥
धव्य भुत प्रचण्ड दूत, पिशाच शत बैताल रे ।
कर नाद तन-नन-ननन-लल-लल, नाच योनिनि-जाल रे ॥
सुकवि लाल विचारि निअ हिय, सकल भेल सनाथ रे ।
एहि विधि सजो चलो विशाहए हरखि भोलानाथ रे ॥
(हरमुखं विलोच्य हिमगिरि-नगरनारी गीतेन कथयति)—

ललित-रागे गीतम् - १६

आएल नगर निकट धरिआत । देखए चललि पुरनागरि सात ॥
नाक हाथ दए चल दुइ-चारि । वर देखि हेमतके देख गारि ॥
धिक धिक से जे जोहल जमाए । देखिए दिगम्बर बाप न माए ॥
आगे माइ! एकओ न होश मन जानिकओने परि जनम गमाउति भवानि ॥
सकवि लाल भन सब भिलि आए । वरगुन मनाइनि कहलनि आए ॥

(एतच्छ्रुत्वा मेना ^{१३}स्वाशयं गीतेन कथयति)—

गण्ड = कल्ला पर (गरा मे मुण्डमाल पहिरला पर गण्डस्थल लग मुण्ड शोभित होएब स्वाभाविक) ।

ब्याल-जाल = सापक समूह । भंग = गमन, अंश । ततकाल = ओही समय । नाद = आवाज ॥

(महादेवक मुह देखि हिमालयक नगरक जनीजाति गीत द्वारा कहैत छथि) —

ललित-राग मे गीत—१६

पुरनागरि = नगरीक चतुर युवतीगण । सात = बहुतो । नाक हाथ दए = वर सँ धृष्टा करैत । हेमत = हिमालय ॥

(ई सुनि मेना अपन अभिप्राय गीत द्वारा कहैत छथि)—

कोलाव-रागे गीतम् - १७

मेना से स्तुति आकुलि भेलि । गौरि मोद नहि मन्दिर नेलि ॥
मारव बेटी मरव बिप खाए । मोचो नहि हिनका करव जमाए ॥
फोरल पुरहर, ऐपन भाँग । सब भसिआएल सिर बहु गाँग ॥
झाला हाथी घएलन्हि जाए । देलन्हि चौमुख-दोप मिश्राए ॥
हेमत चरण परल कर जोड़ि । जानव नहि जनमलि छथि गौरि ॥
एकर नहि आव आन उपाय । हिनकहि कएने भेल^{१४} जमाए ॥
सुकवि लाल सबहि धए लेल । भनहि मनाइनि परिछए गेलि ॥

अथ परिछति-गीतम् - १८

परिछए चललि मनाइनि । देखि बिचुआइलि गाइनि ॥
मालरि देल कोन^{१५} कर धरि । शिर बढिआइलि मुरसरि ॥
^{१६}कोन खोजल वर वाडर । तनु अनुलेपन छाउर ॥
साँकर साँकर देल भाँग । अम्बर गगन^{१७} नगन आँग ॥

ललित-राग मे गीत-१७

आकुलि = विकल । मोचो = हम । भाँग = भग्न कएल । सिर बहु = माँथ
सँ बहल । हेमत = हिमालय (मेना केँ बुझवत प्रार्थना करैत छथि) ।
भनहि = यथाविधि ॥

आव कोलाव राग मे गीत-१८

परिछए = बरक परिछति (परीक्षण) विधि करए । मुरसरि = गंगा ।
वाडर = विशिष्ट । तनु = देह मे । अनुलेपन = चानन । साँकर = विवाह

१४ - होएत - ह० । १५ - कओने - ह० । १६ - कओने - ह० ।

१-एहिठाम समानार्थक 'अम्बर ओ गगन' दु शब्द भिन्नार्थ मे संगहि प्रयुक्त
भेल अछि । दुनूक अर्थ आकाश होइछ ओ एहिठाम अम्बरक अर्थ वस्य
थिक । अतः पुनरुक्तवदाभास अलंकार भेल ।

नाक धरए नहि पावथि । फणिवति डर कर बारथि ॥
काछुक पीठि लेसल दीप । ऐपन वेदी मण्डप नीप ॥
सुगर घर हर एकसर । के संगे कुटत अठोङ्गर ॥
पुरहित धेद अनिध भल । पीअर ताग लपेटल ॥
आमक पात अछत भरि । कङ्कण बन्हलनि कर वरि ॥
सुकवि लाल मन कीमुक बनाए । गौरि सहित हर कोवर जाए ॥

अथ कोलाव-रागे गीतम्-१९

सुभ सुभ मंगल चारि । हरदि चलल हर कोवर दुआरि ॥ध्रु०॥
गौरि सहोदर, दौड़ि देहरि घर, साँकर लज्जित भेला ।
कोटि मनन कए, अभिमत भरि दए, अनुपम मन्दिर गेला ॥
हुइ कुमारि मारिगज हिलिमिलि, पटतर अपलन्हि आनि ।
बिहुँसल अपने विचारि महादेव, करतल धएल भवानि ॥
कामरूप के नएत^{१८} योगिनि, स कएल अपख ब्रैस ।
गौरि सहित आनन अति उमगल, वेदी आएल महेस ॥
(नएता वदति) —

मे बरक ओहिठाम सँ कम्पाक ओहिठाम आएल गोसाउनक लेल नैवेद्य ।
अम्बर गगन = वस्य आकाशे विक्रान्ति । आँग = देह । बारथि = हटवैत
छथि ॥

आव कोलाव राग मे गीत-१९

मंगल चारि = आयु निर्दिष्ट चाँख आनन्ददायक मंगल — (१) गौरीक भाए
दागारि छेकल, (२) यत्नपूर्वक हुनका अभिमत (अभीष्ट) दय घर गेलाह,
(३) हुइ कुमारि (एक गौरी ओ दोसर आन) कपड़ा तर भाँपल छल, महा-
देव केँ बिहूँसल कहल गेलनि तँ गौरी केँ धए लेलथिन ओ (४) अपूर्व भेष
मे मेना-योगिनि छल । कामरूप = कामाख्या (आसामराज्य) । मेना-योगिनि
= तन्त्रशास्त्रप्रसिद्ध देवता । आनन = मुह अति आह्लादित ॥

(नएता (देवता) बजैत छथि) —

१७ - मेना (मेना) - प्र० ।

कोलाव-रागे गीतम्-२०

विहित^{१६} योगिनी हम महीतल, कामरूप मोर वास ।
जबै तबै गमन महीतल, नहि तओ^{१७} भवन अकास ॥
रवि शशि नशकए राखिअ, भाखिअ त्रिभुवन वास ।
कहुखन जओ^{१८} हम चाहिअ, सोविअ सागर सात ॥
धरणी आयु धरिअ पुनु, हमहि करिअ दिन- राति ।
हूलह होएत दुलहिवश, एकर कओन विसाति ॥
जकरा जे न सोहावए, से कर तकर अभिलाष ।
गुणवश मण्डुक सम कए, एक तोहें तोहें भाष ॥
काक पंख रह कारिअ, विनु दागहि होअ दास ।
भए रह मरद तनिक बस, काटथि बड़दक घास ॥
सुकवि लाल भन मन गुनि, जोगिनि जगत अपार ।
से जे जखन करए मन, तखन भेटए के पार ॥

(मण्डपे हिमालयः कथयति)

हिमालयः—भो! पुरोहित ! कन्यादान-समयः सपदि सम्भूतः । विधीयतां च
गोत्राध्यायः ।

कोलाव-राग मे गीत-२०

विहित = विधान कएल गेल, 'विदित' ई पाठान्तरक 'प्रसिद्ध' अर्थ ।
महीतल = पृथ्वीपर । कामरूप = कामारूपा । विसाति = विवाद (दुःख) ।
जकरा जे न = जाहि नारी के^{१९} जे पुरुष नहि चाहैछ से नारी ताही
पुरुषक अभिलाषा करैछ । गुणवश = ककरहु गुण देखि । मण्डुक =
बेछ । काक = कौआक पंखि सन जे (नर) कारी रहत से ॥

(मण्डवा पर हिमालय बजैत छथि)

हिमालय—अओ पुरोहित ! कन्यादानक समय भेट आवि गेल । गोत्राध्याय
आरम्भ कर ।

१६ - विदित योगिनी हूमे - ६० ।

पुरोहितः—(विमृश्य) अहो ! गिरिराज, नाश्व जनक-पितामह प्रपितामहानां
नाम जानामि । तन्निगदन्तु साम्प्रतमथम् ।

(सलज्जः शिवो नतप्रीथो ब्रह्माणम् अधस्तिर्दाम् दृष्ट्वा तूष्णीं तस्थौ ।)

ब्रह्मा—(साट्टहासम्) अहो ! पुरोहित, अस्य प्रपितामहस्य वेदकण्ठ इति,
पितामहस्योन्नकण्ठ इति पितुः श्रीकण्ठ इति, अस्य च नीलकण्ठ इति
नाम यथोचितमधीयताम् ।

(पुरोहितास्तथा विवाहविधे विधानं करोति)

ललित-रागे गीतम् - २१

गौरी-शंकर मण्डप गेल । बड़ कठिन पुरहित कां भेल ॥
बाप पितामह नाम नहि^{२०} जान । कोनपर होयत कन्यादान ॥
तिनू नाम वरहिक कहि देल । ते^{२१} विधि मोत्र उच्चारण भेल ॥
^{२२} पुरहित कएलनि अपन छुटानि । महा हरणमय भेल सुलपानि ॥
सुकवि लाल एहो अचरज भान । एहनो देखल विवाह-विधान ॥

पुरोहित—(विचारि) आहि रे वा ! गिरिराज, हिनक बाप पितामह ओ प्रपि-
तामहक नाम नहि बुझल अछि । ते^{२३} एखन दयेह कहथु ।

(लज्जित शिव मूढ़ो शुकओने ब्रह्माक दिस नीचहि मुहें कनडेरिए ताकि
बुझे रहैत छथि ।)

ब्रह्मा—(ठहकका मारि) आह ! पुरोहित, हिनक प्रपितामहक वेदकण्ठ, पिताम-
हक उन्नकण्ठ, पिताक श्रीकण्ठ ओ हिनक नीलकण्ठ नाम यथोचित रूपे^{२४}
पढ़िअहु ।

(पुरोहित सहित विवाह-विधिक काज करैत छथि)

ललित - राग मे गीत - २१

कोन परि = कोन तरहें । सुलपानि = सुलपानि (महादेव) ।

१६ - ने - ६० ।

२० - पुरहित कएलनि अपन छुटो । ओ विधि निमहि बेलनि उठो ॥

महाहरणमय भेल सुलपानि । मन मन मगन भेली भयानि ॥ - ६० ।

अथ सिन्दूरदानम् । गीतम्-२२

सिन्दूरदानं तिमि इन्दुहि पञ्चोलनिह, घोषट बाधक छाल ।
 आशोर वीधि निधान कएल हर, एक कपालक माल ॥
 ब्रह्मा विष्णु मुनीन्द्र वेद भन, दुवि अच्छत सार देला ।
 खन मन हरख, विषाद भेटाएल, निज निज गृह सभ गेला ॥
 मुकवि लाल भन सुनहु भगत-जन, हरक विवाह विधाने ।
 भुक्ति मुक्ति अभिमत फल दायक, के जग तनितह आने ॥

बटगवनी गीतम्-२३

आंगुरि लाए लेल त्रिपुरारि । चललि कोबर गिरिराज-कुमारि ॥
 लघु लघु पगु देअ पथ सुकुमारि । गावए मंगल सखि दुइ चारि ॥
 हर देखि कोशल नयन निहारि । सिन्दूर धार देल एक नारि ॥
 कोबर गेल हर हृदय विचारि । पञ्चोलनिह गौरि पदारथ चारि ॥
 मुकवि गणक भन आपद फारि । हरषु^१ दुरित गौरि हरखि निहारि ॥
 (ततः कौतुक-लोलया अनिर्बचनीयाद्भुत-सुखमासाद्य [श्रीशङ्करः]
 कैलासपुर-गमनोत्सुको बभूव ।)

★ इति श्रीकविलाल-धिरचितं गौरीस्वयंवरनाटकं समाप्तम् ★

अथ सिन्दूरदानक गीत—२२

तिमि = ओ (गौरी) । इन्दुहि = चन्द्रमा लए के (सोत, शनि, साँख आदि
 लए के सिन्दूरदान होइल) । एक = एकटा विधि नव कएलनि जे कपालक
 माला देलथिन । विषाद = दुख । भुक्ति = भोग, मुक्ति = मोक्ष ॥

बटगवनी गीत—२३

त्रिपुरारि = महादेव । पगु = डेग । कोशल = कुबलतापूर्वक । नारि
 = नारी के (गौरी के) । दुरित = पाप ॥

(तजन कोबरा घरक लीला सँ अचर्यनीय अद्भुत सुख-पाथि के श्री-
 शङ्कर भगवान अपन नगर कैलास जएबाक लेल उद्यत भेलाह ।)

एहि प्रकारे श्रीकविलालक बनाओल गौरीस्वयंवरनाटक समाप्त भेल ।

१—ई पद एहि नाटिकाक 'सरत बावय'क काल करेध । एहि तरहक आशय एहि
 नाटिकाक आन गीत में कतहु नहि वर्णित अछि । तथापि खूब सम्भव जे 'सरत-
 बावय' बला वक्तोके लेखक-प्रभावात् छूटि गेल हो ।

२—धिरचिता गौरीस्वयंवरनाटिका समाप्ता—२० ।